शिक्षा का अधिकार और ध्वस्त होती सरकारी व्यवस्था

जय कुमार

देश का कोई भी राज्य हो, सरकारी स्कूल प्रणाली के बारे में जितना कम कहा जाए, उतना ही बेहतर होगा। इसमें भी मप्र की स्थिति और भी बदतर है। जर्जर बुनियादी ढांचा, शिक्षकों की कमी और सबसे बढ़कर, शिक्षा को लेकर सरकारी उदासीनता से प्रदेश में सरकारी शिक्षा व्यवस्था ध्वस्त होने की कगार पर पहुंच चुकी है। ऐसे में डिस्ट्रिक्ट इंफॉर्मेशन सिस्टम फॉर एजूकेशन (डाइस) की रिपोर्ट में अगर शिक्षा की गुणवत्ता के मामले में मप्र का नाम शुरू के 25 राज्यों में भी नहीं आता है तो इसमें आश्चर्य कम, क्षोभ ही ज़्यादा होता है।

'निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार' कानून को लागू हुए दो साल हो चुके हैं। हालांकि व्यावहारिक तौर पर इस कानून पर अमल इसी साल से होना शुरू हुआ है। निश्चित तौर पर कानून का मुख्य मकसद स्कूल जाने योग्य तमाम बच्चों की शिक्षा तक पहुंच सुनिश्चित करना ही ज़्यादा रहा है, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा नहीं। लेकिन यह भी तय है कि गुणवत्ता वाले पहलू की पूरी तरह उपेक्षा से शिक्षा तक पहुंच के मार्ग में कांटे ही ज़्यादा बिखरेंगे। और प्रदेश में इसके लक्षण दिखाई भी देने लगे हैं।

प्रदेश के सरकारी स्कूलों से अभिभावकों का मोहभंग होना शुरू हो गया है। सम्पन्न तबकों के लोग तो वर्षों पहले ही सरकारी स्कूलों से मुंह मोड़ चुके थे। अब गरीब व वंचित तबकों के वे अभिभावक भी सरकारी स्कूलों से दूर जा रहे हैं, जो वाकई अपने बच्चों को पढ़ा-लिखाकर कुछ बनाना चाहते हैं। राजधानी भोपाल के आसपास के इलाकों में जाएं तो पता चलता है कि ग्रामीण अंचलों के छोटे-छोटे किसान भी अपने बच्चों को निजी स्कूलों में भर्ती करवा रहे हैं। विडंबना यह है कि ये निजी स्कूल भी इस बात की गारंटी नहीं देते कि वहां गुणवत्तापूर्ण शिक्षा ही प्रदान की जाएगी। लेकिन यह इस बात का तो प्रमाण है ही कि लोगों का विश्वास सरकारी स्कूलों से दरका है।

उदाहरण के लिए, राजधानी भोपाल के पड़ोस में स्थित एक हज़ार की आबादी वाले एक गांव में सरकारी स्कूल तो एक है, लेकिन निजी स्कूल दो। इस गांव की सरकारी प्राथमिक शाला में महज 59 बच्चों के नाम दर्ज़ हैं, जबकि पड़ोस में ही स्थित निजी स्कूल में डेढ़ सौ बच्चे। और यह केवल एक उदाहरण भर नहीं है। प्रदेश के अन्य हिस्सों में भी कमोबेश यही स्थिति होगी। फंदा ग्रामीण ब्लॉक के बर्राई ग्राम में स्थित सेंट फ्रांसिस को-एड स्कूल की प्राचार्य सिस्टर मेरी बताती हैं कि उनके स्कूल में 40 फीसदी बच्चे गांवों के किसान परिवारों के हैं। तो ऐसे में सरकारी स्कूलों में वे ही बच्चे जा रहे हैं, जिनके अभिभावक इस स्थिति में नहीं हैं कि वे निजी

निजी स्कूल की चाहत

अर्जुन राजधानी भोपाल के एक सरकारी स्कूल में पढ़ता है। उसके पिता मोची हैं। वह इन दिनों अपने पिता की दुकान में हाथ बंटाता है। यह पूछने पर कि वह स्कूल क्यों नहीं जाता, क्या उसके पिता ने उसे स्कूल से निकलवा लिया है? उसका जवाब चौंकाने वाला था। उसने बताया कि उसके पिता उसे एक बड़े स्कूल (पास के ही एक निजी स्कूल) में डालना चाहते हैं, लेकिन सरकारी स्कूल की हेडमास्टर उसका टीसी नहीं दे रही है। जब तक टीसी नहीं मिलता, तब तक वह इसी दुकान में काम कर रहा है। टीसी मिलते ही वह बड़े स्कूल में पढ़ने चला जाएगा।

स्कूलों का खर्च वहन कर सकें। जैसा कि पास के गांव की शासकीय प्राथमिक शाला के हेडमास्टर बताते हैं, उनके स्कूल में कुल 48 बच्चे हैं और सभी बच्चे हालियों (खेतिहर श्रमिकों) के हैं। इन बच्चों में सामान्य वर्ग के केवल तीन ही बच्चे हैं।

ज़ाहिर है, सरकारी अफसर स्कूलों की गुणवत्ता सुधारने के तमाम दबावों से मुक्त हैं। जो वर्ग दो जून की रोटी कमाने में ही जुटा है, उसे इस बात की चिंता शायद ही होगी कि उनके बच्चे किन परिस्थितियों में पढ़ रहे हैं। स्कूलों में मध्यान्ह भोजन और निशुल्क यूनिफार्म उन्हें संतुष्ट कर देती है कि उनके बच्चों को भले ही शिक्षा न मिले, रोटी और कपड़ा तो मिल ही रहा है। सरकार भी मध्यान्ह भोजन और निशुल्क यूनिफार्म के पैबंद लगाकर यह सुनिश्चित कर लेती है कि येन-केन-प्रकारेण उसकी व्यवस्था चलती रहे।

सरकारी शिक्षा व्यवस्था

शिक्षा का अधिकार कानून से शिक्षा व्यवस्था मज़बूत होनी चाहिए, लेकिन संकेत ऐसे ही हैं कि इससे सरकारी स्कूलों की हालत और भी पतली ही होगी। निजी स्कूलों में 25 फीसदी स्थान वंचित तबकों के लिए आरक्षित करने से सरकारी स्कूलों में बच्चों के प्रवाह में और भी कमी आएगी। भोपाल ज़िले के 1050 सरकारी स्कूलों की पहली कक्षा में नामांकन के प्रारंभिक आंकड़े बताते हैं कि इसका असर पड़ना शुरू हो गया है। इन स्कूलों की पहली कक्षा में बच्चों के नामांकन में 60 फीसदी तक की कमी आई है। यह तो अभी आगाज़ है, अंदाज़ बाकी है। कई शिक्षाविद आगाह कर रहे हैं कि अगर ऐसा ही चलता रहा तो आने वाले एक दशक में सरकारी स्कूल बिलकुल ही अप्रासंगिक हो जाएंगे। लेकिन इसके नतीजे और भी गंभीर होंगे।

सरकारी स्कूलों की स्थिति डांवाडोल होने के साथ ही पढ़ाई महंगी भी हो जाएगी। निजी स्कूलों की 25 फीसदी सीटों पर गरीब बच्चों को प्रवेश देने से उनके खर्च का बोझ निजी स्कूल प्रबंधन अन्य बच्चों के अभिभावकों पर ही डालेंगे। प्रदेश के लगभग सभी निजी स्कूलों ने अपनी फीस में वृद्धि कर दी है। कई स्कूलों में तो यह दुगनी से भी ज़्यादा हो गई है। निजी स्कूलों की फीस के नियमन के लिए किसी कानून के अभाव में इसका सबसे ज़्यादा खामियाज़ा अंततः मध्यम वर्ग को भुगतना होगा।

इच्छाशक्ति का अभाव

तो क्या सरकारों ने स्कूल व्यवस्था को पूरी तरह से निजी क्षेत्र के हवाले करने का निश्चय कर लिया है? लगता ऐसा ही है। यह डाइस के आंकड़ों से भी साबित होता है। वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान प्रदेश में 1753 नए सरकारी स्कूल खोले गए,

कहां गए सम्पन्न तबकों के बच्चे?

खरगोन शहर की एक माध्यमिक शाला। छठी से आठवीं तक के इस स्कूल में 152 बच्चे हैं, लेकिन सभी बीपीएल तबके के। हेडमास्टर बताते हैं कि कुछ साल पहले तक इसी स्कूल में शहर के हर वर्ग के बच्चे पढ़ा करते थे। यह इस बात का सबूत है कि अभिभावकों की पहली कोशिश यही है कि किसी भी तरह बच्चों को सरकारी स्कूल से निकालकर निजी स्कूल में डाल दिया जाए।

मप्र में शिक्षा के हालात

स्कूल

वर्ष	शासकीय	निजी
2008-09	1,09,757	22,989
2009-10	1,11,510	23,455

छात्रों का नामांकन (1-5)

वर्ष	शासकीय	निजी
2008-09	78,95,459	33,83,387
2009-10	74,78,142	34,49,841

शिक्षकों की स्थिर संख्या

वर्ष	शिक्षकों की संख्या
2007-08	2,78,856
2008-09	2,79,708
2009-10	2,80,098

स्रोतः डाइस, 2009-10

लेकिन इनमें शिक्षक केवल 390 नियुक्त किए गए। शिक्षक के बगैर स्कूल कैसे? आखिर पूरी शिक्षा व्यवस्था का आधार ही शिक्षक होता है, लेकिन हमारी सरकारों को इससे क्या फर्क पड़ता है। प्रदेश के 16 फीसदी स्कूल एक शिक्षक के भरोसे चल रहे हैं। यानी अगर किसी दिन वह शिक्षक न आए तो स्कूल में ताला। इस स्थिति से बचने के लिए सरकार ने एक तरीका ढूंढ निकाला है - अतिथि अध्यापक। सौ रुपए रोज़ पर नियुक्त ये अतिथि अध्यापक बच्चों को क्या पढ़ाएंगे और क्यों पढ़ाएंगे?

प्रदेश में शिक्षकों की कमी का आलम यह है कि प्रति स्कूल शिक्षकों की संख्या महज 2.5 है। इसकी तुलना में निजी स्कूल कहीं बेहतर नज़र आते हैं जहां प्रति स्कूल शिक्षकों की संख्या तो 7 है।

ऐसे में यह बात समझ से परे है कि शिक्षा का अधिकार कानून के तहत प्रति 30 बच्चों पर एक शिक्षक का मानदंड कैसे पूरा होगा। इस प्रावधान को पूरा करने के लिए प्रदेश में अगले दो साल के भीतर 1 लाख 32 हज़ार शिक्षकों की ज़रूरत होगी। इसके लिए पैसे की कमी तो आड़े नहीं आनी चाहिए। आखिर निशुल्क यूनिफार्म पर ही मप्र में 425 करोड़ रुपए खर्च किए जाने हैं। अगर यही पैसा बुनियादी चीज़ों पर खर्च किया जाए तो उसके बेहतर नतीजे आ सकते हैं। लेकिन यह तब होगा जब हमारे कर्णधारों में सरकारी शिक्षा व्यवस्था को सुधारने की इच्छाशक्ति होगी। ***(स्रोत फीचर्स)***